(कवित्त)

उठि न सकत ससकत नैन-बान बिंधे
इतेहू पै विषम-विषाद जुर लू बरे।
सूरे पन पूरे हेत-खेत तें हटैं न कहूं
प्रीति-बोझ बापुरे भए हैं दबि कूबरे।
संकट समूह में बिचारे घिरे घुटैं सदा
जानी न परत जान कैसे प्रान ऊबरे।
नेही दुखियानि की यहै गति आनंदघन
चिंता-मुरझानि सहैं न्याय रहैं दूबरे ॥४६॥

प्रकरण—प्रेम के विरहियों की स्थिति का निरूपण है। उन्हें प्रेमयुद्ध का योद्धा बताया गया है। अन्य युद्धों से प्रेमयुद्ध में विलक्षणता प्रतिपादित की गई है। प्रेमी नयन-बाण-विद्ध होता है। भीषण ज्वर उसे चढ़ता है फिर भी वह प्रेमक्षेत्र से हटता नहीं। संकटों के समूह में उसके प्राण कैसे बचे रह जाते हैं, अचरज इसी बात का होता है। वे अनेक ऐसी स्थितियों में होते हैं जिनसे उनका दुबला होना उचित ही है।

चूर्णिका—ससकत = सिसकते हैं, वेदना से कराहते हैं। नैन० = नेत्र के कटाक्षरूपी बाणों से विद्ध (वे प्रेमी)। जुर = ज्वर। इतेहू० = इतने पर भी विषम विषाद का ज्वर लू की भाँति जलता रहता है। सूरे० = प्रतिज्ञा-पूर्ण करने में वीर। हेत-खेत = प्रेमरूपी क्षेत्र (रणक्षेत्र)। हटैं न = टलते नहीं। कहूं = कभी। बापुरे = बेचारे। दबि = प्रेम के बोझ से) दबकर। कूबरे = कुबड़े हो गए हैं, कमर टूट गई है (भाराधिक्य से, अंग-भंग हो गया है)। घुटैं = दम घुटता रहता है। कैसें = किस प्रकार। ऊबरे = बचे हैं। गति = दशा। न्याय० = (प्रेमियों का) दुबला रहना ठीक ही है।

तिलक—प्रेम के विरही ऐसे योद्धा हैं कि वे प्रेम का बोझ लिए हुए दबकर कुबड़े हो गए हैं, फिर भी प्रेम के रणक्षेत्र से हटते नहीं। केवल प्रेम का ही भारी बोझ उनपर नहीं है। कटाक्ष के बाणों से ऐसे विद्ध हैं कि केवल वेदना से कराहते हुए पड़े हैं, उठने की भी शक्ति उनमें नहीं रह गई है।

उठने का प्रयास करने पर बाणों का ही केवल आघात नहीं है, विषाद का ज्वर भी भीषण चढ़ा है, लू जला रही है, प्रचंड उष्ण वायु बह रही है। इतने पर भी कदाचित् वे वहाँ से सुरक्षित स्थान पर आ जाते पर संकटों के समूह ने घेर भी रखा है, वे निकलने नहीं देते। इससे उन बेचारों के प्राण सदा घुटते रहते हैं। हे प्रिय सुजान, समझ में नहीं आता कि उनके प्राण बचे हैं तो कैसे बचे हैं। प्रेमी विरही अत्यंत दुखिया होते हैं, उनकी यही दशा होती है। चिंता में मुरझाते रहते हैं। उनका दुबला-पतला हो जाना ठीक ही है। योद्धा बाणों से विद्ध होकर कराहते हैं, अधिक बाण लगने पर रणक्षेत्र से हट नहीं सकते, उन्हें भीषण ज्वर चढ़ आता है, वे कवच आदि के बोझ से दबे रहते हैं। सेना से घिरते हैं, फिर भी बचते हैं। बेहोशी में आ पड़ते हैं। विरही प्रेमी कटाक्षों से विद्ध होकर वेदना में कराहता है, विरह का भीषण ताप उसमें रहता है, अपनी प्रतिज्ञा की पूर्ति में वह इस क्षेत्र का त्याग नहीं करता। प्रेम का बोझ उसके निरंतर क्षीण होते जाने से उसकी कमर तोड़ देता है। वे प्रेम की दाब में ही रहते हैं। संकट, विषाद सभी उन्हें घेरे रहते हैं। फिर भी प्राण नहीं निकलते। उन्हें बारंबार बेहोशी आती है। वे दुबले हो जाते हैं।

व्याख्या—उठि० = उठने की शक्ति होती तो उठ ही जाते। आघात गहरा है 'न सकत' और 'ससकत' में शब्द-विरोध दर्शनीय है। केवल यमक का चमत्कार नहीं है। ससकत = केवल सिसकने की शक्ति है, और शक्ति नहीं है। नैन० = बाणों का आधिक्य, उनका गहरा वार व्यंजित है। बिधे = बाण निकले कहाँ हैं, निकल जाते तो वेदना कम हो जाती। इतेहू पै = केवल बाणों का आघात ही उठने नहीं देता या अब भीषण ज्वर भी उठने नहीं देता। विषम = जो सम न हो, एक-सा न रहे कभी तो भीषण ताप हो जाए और कभी ठंडक हो। जैसे मलेरिया का ज्वर। विषाद० = विरह का ज्वर, संयोग में प्रसाद, वियोग में विषाद। लू = लू की भाँति स्वयम् भी जलता और दूसरे को भी जलाता है। बरै = निरंतर प्रज्वलित है। सूरे = वह वीर जो कभी पीछे पैर नहीं धरता। पन० = प्रतिज्ञा में किसी प्रकार की कमी नहीं, उससे भरे हुए हैं। हेतु०—प्रेम का यह क्षेत्र उनके लिए हितकारी है, उन्हें रुचता है। हटैं न = कभी नहीं हटते; हटना ही नहीं चाहते। कहँ = कभी नहीं, कहीं से भी नहीं। प्रीति = प्रीति

कवच की भाँति सारे शरीर में छाई है, इसी से उस पर बोझ अधिक हो गया है। बोझ = इस भार को वे हटाते भी नहीं, प्रीति उनके लिए रक्षक भी है। बापुरे = प्रतिज्ञा की विवशता से विवश। भए हैं० = आघात और ज्वर ही नहीं, बोझ से दबे भी हैं जिससे कमर झुक गई है। दबि = बोझ केवल झुकानेवाला नहीं है दबानेवाला भी है। कोई अंग जिसमें हिल न सके। कूबरे—सदा के लिए कुबड़े हो गए, उससे ठीक होने की भी संभावना नहीं है। संकट० = घिराव हटा नहीं है, अब भी घिरे हैं। अपर पक्ष इतना निर्दय है कि इतने पर भी छोड़ नहीं रहा है। बिचारे = बापुरा वह होता है जिसके अपने सहाई कोई न हो। बेचारा वह होता है जो परिस्थिति से विवश हो। घिरे = घिराव इतना है कि साँस लेने के लिए भी अवकाश नहीं। घूँटे = मरणांतक स्थिति हो गई है, कंठावरोध हो रहा है, भीतर की साँस भीतर और बाहर की बाहर है। सदा = थोड़े समय का भी अवकाश नहीं है। जानौ० = कुछ भी इस विलक्षणता का अंदाज नहीं लगता। जान = हो सकता है मैं अजान होने से न समझती होऊँ, आप सुजान हैं कुछ समझते हों तो बताइए। कैसे० = कोई बचाव का मार्ग नहीं रह गया था। प्रान० = प्राण साधारण आघातों तक से निकल पड़ते हैं, पर ये बच गए। उबरे = अभी निकलने की संभावना भविष्य में भी बहुत दिनों तक नहीं है। नेही = वह प्रेमी जिसमें चिकनाहट अधिक हो। दुखियानि = कुछ मेरी नहीं अनेक विरहियों की यही स्थिति है। यहै गति = दूसरी स्थिति यदि हो तो वह सच्चा प्रेमी नहीं। अनंदघन = यही स्थिति उनके लिए आनंददायिनी है। चिन्ता०—चिंता की मूर्छा आ जाती है, बराबर आती रहती है। न्याय रहैं०—दुबले होने के सभी हेतु हैं। बान लगने पर रक्तस्राव से दौर्बल्य, ज्वर होने पर शोष से दौर्बल्य।। दबने से पिचककर दौर्बल्य। दम घुटने से शक्तिक्षीणता से दौर्बल्य। दूबरे = दुबले हो गए हैं, होते जाते है. पर प्राणांत नहीं होता। प्राण निकलने के अनेक कारण दिखाए गए, पर प्राण नहीं निकलते;

पाठांतर—हैं हटैं = मैं लहैं (कोई दाँव अपने आघात का नहीं मिलता)। बापुरे = बावरे ('बापुरे बेचारे' की पुनरुक्ति बचाने के लिए 'बावरे'—प्रेम के पागलपन में बोझ भी अधिक लाद लिया)। यहै = ऐसी।

सुखनि समाज साज सजे तित सेवैं सदा
जित नित नए हित-फंदनि गसत हो।
द दुख-तम-पुंजनि पठाय दे चकोरनि पै
सुधाधर जान प्यारे भलैं ही लसत हो।
जीव सोच सूखै गति सुमिरैं अनंदघन
उ कितहूँ उघरि कहूँ घुरि कै रसत हो।
उजरनि बसी है हमारी अँखियानि देखौ
सुबस सुदेस जहाँ भावते बसत हो॥ ५० ॥

प्रकरण—प्रिय के यहाँ और प्रेमिका के यहाँ परस्पर विपरीत स्थिति है। इसी का उल्लेख प्रेमिका, प्रिय को संबोधित कर, कररही है। प्रिय जहाँ रहते हैं वहाँ सुखों की अवस्थिति है, नित्य नए-नए प्रेमी उनके प्रेम में फँसते रहते हैं। वहाँ सुख का प्रकाश है। पर प्रेमिका के यहाँ दुःख का अंधकार है। प्रिय वहाँ प्रेमियों से घुल-घुलकर बातें करता है और यहाँ प्रेमिका से वह मिलता भी नहीं, दर्शन भी नहीं देता, दूर-दूर ही रहता है। जहाँ प्रिय है वह स्थान बसनेवालों से भरा-पूरा है, यहाँ केवल उजाड़ है।

चूर्णिका—तित = वहाँ, प्रिय जहाँ हैं। हित० = प्रेम के फंदों में। गसत० = डालते हो। सुखनि० = जहाँ आप नित्य नए नए प्रेम के फंदों में लोगों को फँसाते रहते हैं वहाँ तो अनेक प्रकार के सुखों का साज सजाकर सदा आनंद मनाते रहते हैं। दुख तम० = दुःखरूपी अंधकार का समूह चकोरों के पास भेज दिया है। सुधाधर = चन्द्रमा(के समान), सुधा + अधर। भले हीं = भली भाँति, क्या ही अच्छे। जीव० = हे आनंद के घन, आपकी चाल का ध्यान करके हृदय सोच के मारे सूख जाता है। उघरि = उद्घाटित होकर, हटकर उचटकर। घुरि कै = घुलकर। रसत० = रस बरसाते हो। कितहूँ० = (कहीं तो आप) उघड़कर (हटकर) रह रहे हैं, रसवृष्टि से कोई प्रयोजन नहीं और कहीं तो घुलघुलकर (निरंतर घिरे रहकर) रस बरसाया करते हैं। उजरनि० = हमारी आँखों में तो उजड़न बसी हुई है। (हमारी आँखें उदास, मलिन रहती हैं)। सुबस = भली भाँति बसा हुआ। भावते = (भानेवाले) प्रिय। सुबस० = जहाँ आप जा बसे हैं वहाँ सुदेश (सुंदर बस्ती) भली भाँति बसा हुआ है। 'उजरनि बसी' तथा अन्यत्र भी विरोध का प्रदर्शन है।

तिलक—हे सुजान प्रिय, जहाँ आप जा बसे हैं और नित्य नए नए प्रेमियों को अपने प्रेमपाश में फँसाने के लिए फंदे डालते रहते हैं वहाँ सुखों के समाज के समाज पूरी साज-सज्जा के सहित आपकी सदा सेवा करके रहते हैं। आप कैसे सुधाधर हैं कि आपने सुख का प्रकाश तो केवल अपने लिए ही रख लिया है और दुःख के अंधकार का पुंज का पुंज अपने प्रेमी चकोरों के पास भेज दिया है। इस प्रकार के कृत्य करके आप अच्छे सुशोभित हो रहे हैं (यह कार्य अशोभन है)। आप हैं तो आनंद के घन पर आपकी गतिविधि का स्मरण करने पर उसके सोच से प्राण सूख जाते हैं। इतना ही नहीं, आप कहीं तो (मुझ जैसे प्रेमियों के यहाँ) उद्घाटित हो गये हैं (एकदम हट गए हैं, दूर चले गए हैं) और कहीं (जहाँ आप नए-नए प्रेमी फँसाते हैं ; घुलकर (जमकर) रसवृष्टि कर रहे हैं। हमारी आँखों में देखिए केवल उजड़न बसी हुई है और हे रचनेवाले प्रिय जहाँ आप हैं वह सुंदर देश भली भाँति बसा है।

व्याख्या—सुखनि = अनेक सुख, विविध प्रकार के सुख, अत्यधिक सुख। समाज = पूरे परिकर के सहित। साज० = साज-सामान से रहित वे सुख और परिकर नहीं हैं, वे भी सब प्रकार से सज्जित हैं। केवल 'सजे' न कहकर 'साज सजे' कहने में अधिक स्वारस्य है। 'सुनना' और 'कान से सुनना' में 'कान से सुनना' ध्यान से सुनने के अर्थ में जैसे होता है वैसे ही 'सजे' और 'साज सजे' में 'रच-रचकर साजे' यह व्यंजना है। तित = अन्यत्र जाते ही नहीं। सेवैं = वहाँ रहते ही नहीं आपकी सेवा में संलग्न रहते हैं, आपको किसी प्रकार कोई कष्ट उठाने न देने की वृत्ति से आपके पास रहते हैं। सदा = प्रत्येक समय आपके लिए संनद्ध हैं। जित = आप जहाँ जा बसे हैं, आप जहाँ रहेंगे वहीं यह स्थिति रहेगी। नित = प्रतिदिन नवीन प्रेमी की प्राप्ति, नवीन प्रकार के फंदे का प्रयोग। नए = पुराने का परिपूर्ण त्याग, नए-नए। हित० = एक काम नहीं आया तो दूसरा फंदा। गसत० = ग्रस्त करते रहते हैं प्रेमियों को, वे फंदे डालकर। ग्रस्त करने के लिए डालते हैं। छूट जाने का नाम नहीं। दुख = अंधकार का लेश भी आप के पास नहीं रहा, सब यहीं भेज दिया है। पठाय दे = उन दुःखों को आपके पास लौटाने की आशा नहीं है, जो मेरे पास भेजे गये हैं वे अब लौटेंगे नहीं। चकोरनि० =

'चकोरों' बहुवचन प्रयोग प्रेम की व्यक्तिबद्धता हटाने के लिए है। चंद्र आकाश में रहता है पुरानी रूढ़ि के अनुसार आकाश सुखभूमि है और चकोर पृथ्वी पर है जो उस रूढ़ि के अनुसार दुःखभूमि है। आधुनिक छायावादी कवियों ने इस रूढ़ि का पालन कहीं-कहीं स्पष्ट किया है। 'प्रसाद' में यह बहुत स्पष्ट है। सुधाधर = केवल प्रकाश को ही धारण करनेवाले आप नहीं हैं, सुधा को भी धारण करते हैं। आपका प्रकाश ही तो सुधा पहुँचाता है। अन्यत्र प्रिय पक्ष में 'सुधायुक्त अधर' करके अमृत तत्त्व की अवस्थिति वहाँ भी सिद्ध की गई है। जान = सुजान प्रिय, प्राणप्रिय आप ही हैं केवल मेरे प्रिय। भले हौ० = अच्छे ढंग हैं आपके, खूब छजते हैं इस कर्तृत्व से आप। व्यंग्य से इसके विपरीत आपके कार्य बुरे लगते हैं। लसत = आपके लिये जो स्थिति शोभन है वही दूसरे के लिये अशोभन हो रही है। जीव = प्राण, जीवन (इसका श्लिष्टार्थ 'जल' भी)। सोच = चिंता की ज्वाला उत्पन्न हो जाने से। सूखै = सरसता का नाम नहीं रहा जा रहा है। गति० = इसके स्मरणमात्र से यह स्थिति है, देखने से न जाने क्या हो। आनन्दघन के स्मरण से सूखने में विरोध है। आनन्द का विरोध 'सोच' से, 'घन' का विरोध 'सूखै' से। कितहूँ = मुझ जैसे अभागे प्रेमियों के यहाँ। उघरि = बादल के पक्ष में आकाश से हटकर, प्रेमी प्रिय पक्ष में 'खुलकर', जिसके दो अर्थ होंगे—हटकर दूर जा कर तथा प्रत्यक्ष खुल्लमखुल्ला परित्याग करके। कहूँ = जहाँ आप जा बसे हैं। घुरि = बादल के पक्ष में 'घुरि' में केवल 'स्रवना' ही अर्थ नहीं, रसवृष्टि घोर (= घोष) पूर्वक गर्जन के साथ होती है यह भी अर्थ है। प्रिय पक्ष में 'घुलकर' में अत्यन्त तल्लीन और एकांत दोनो की व्यंजना है। रसत = जलवृष्टि, आनन्द की वृष्टि करते ही रहते हैं, कभी हटते नहीं। उजरनि = आँखों में और कोई नहीं बसा है केवल उजाड़ बसा है, उनमें दर्शन के अभाव के कारण सुबसता नहीं है, वे उदास, मलिन, दुखी हैं। बसी है = अब शीघ्र हटनेवाली नहीं है। स्थायी निवास कर लिया है। हमारी = व्यक्तिबद्धता के निरसन के लिए बहुवचन का प्रयोग। अँखियानि = दोनो से। देखौ = मुझे तो दिखता नहीं, आप इन आँखों को यह स्थिति देख लें, इसी बहाने आइए तो आपके दर्शन हों, तमाशबीन

बनकर ही मेरी स्थिति देख जाइए । सुबस=बस्ती के लिए अपेक्षित साधनों से युक्त । सुदेस=स्थान प्रकृत्या भी सुन्दर है । जहाँ=यदि वहाँ सुन्दरता आदि न होती तो आपके सांनिध्य से अवश्य हो जाती । जहाँ आप बसें वह देश, अतिसुंदर की व्यंजना सुबस, सुदेश और आपके सांनिध्य का गौरव । भावते=सभी को भाते हैं, इतने विपरीत कृत्यों पर भी मुझे भाते हैं । सौंदर्य बाहरी है, बहिरंग है, अंतरंग में सुन्दरता नहीं है । सहृदयता नहीं है, रमणीयता है । बसत=कहीं रहने का विचार कर लिया है, स्थायी वासस्थल कर लिया है ।

विशेष—इस छंद में फारसी की शैली स्पष्ट झलक रही है । वहाँ 'माशूक' गैरों से मिला करता है, उन रकीबों पर उसकी ज्यादा निगाह होती है ।

पाठांतर—समाज=समान (मानपूर्वक सेवा करते हैं) ।